

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय की तिथि: 20 दिसंबर, 2013

आप.अ. 1387/2012

मो. तस्कीन

.....अपीलार्थी

द्वारा: श्री इमरान खान, अधिवक्ता।

बनाम

राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र सरकार) दिल्ली

.....प्रत्यर्थी

द्वारा: सुश्री फिज़ानी हुसैन, राज्य हेतु अति.लो.अभि.।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति सुश्री सुनीता गुप्ता

निर्णय

: न्या. सुनीता गुप्ता,

1. इस अपील में दिनांक 22 मार्च, 2012 और दिनांक 23 मार्च, 2012 के सत्र मामला सं. 15/2011 के निर्णय और दंडादेश के आदेश को चुनौती दी गई है, जो भारतीय दंड संहिता 1860 (संक्षेप में, "भा.दं.सं.") की धारा 363/376/506/34 के अंतर्गत पुलिस स्टेशन सराय रोहिल्ला में पंजीकृत प्राथमिकी सं. 375/2010 से उद्भूत हुआ है, जिसके अंतर्गत अपीलार्थी को

भा.दं.सं. की धारा 376 के अंतर्गत अपराध के लिए दोषी सिद्ध किया गया और 4 वर्ष के सश्रम कारावास के साथ-साथ उस पर 5000 रुपये का जुर्माना अधिरोपित किया गया और जुर्माना न चुकाने पर 2 महीने के साधारण कारावास का दंडादेश भुगतने का दंडादेश दिया गया था।

2. अभियोजन पक्ष का मामला इस तथ्य से शुरू होता है कि दिनांक 11 नवंबर, 2010 को परिवादी राम अनुज ने सराय रोहिल्ला पुलिस स्टेशन में आकर अपनी लगभग 15 वर्षीय पुत्री अर्थात् अभियोक्त्री (पहचान गुप्त रखने के लिए नाम नहीं बताया गया है) की लापता की रिपोर्ट दर्ज कराई, जो दिनांक 8 नवंबर, 2010 से लापता थी। उसने आगे सुनील नामक व्यक्ति पर अपना संदेह जताया, जो शिकायतकर्ता के साथ उसी घर में किराएदार के रूप में रहता था और कहा कि हो सकता है कि उसकी पुत्री को उक्त सुनील बहला-फुसलाकर भगा ले गया हो। परिवादी के बयान पर भा.दं.सं. की धारा 363 के अंतर्गत मामला दर्ज किया गया। मामले के अन्वेषण के दौरान, दिनांक 13 नवंबर, 2010 को अभियुक्त/अपीलार्थी मोहम्मद तस्कीन को पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन से गिरफ्तार किया गया और अभियोक्त्री को उसके कब्जे से बरामद किया गया। मामले के अन्वेषक अधिकारी ने अभियोक्त्री का बयान दर्ज किया जिसमें उसने बताया कि अभियुक्त मोहम्मद तस्कीन ने उसे डरा धमकाकर उसके साथ बलात्कार किया। अभियोक्त्री और अभियुक्त दोनों की चिकित्सीय परीक्षा कराई गई। आरोप पत्र में भा.दं.सं. की धारा 376/506/34 जोड़ी गई। मामले के आगे

के अन्वेषण के दौरान मामले के अन्वेषक अधिकारी ने अभियोक्त्री का बयान दं.प्र.सं. की धारा 164 के अंतर्गत अभिलिखित करवाया, स्थल योजना तैयार की, अभियोक्त्री का जन्म तिथि प्रमाण पत्र प्राप्त किया, प्रदर्श को एफएसएल(फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला) को भेजा गया। अन्वेषण पूर्ण होने के बाद भा.दं.सं. की धारा 363/376/506/34 के अंतर्गत न्यायालय में आरोप पत्र दायर किया गया।

3. अपीलार्थी के विरुद्ध भा.दं.सं. की धारा 376/506 के अंतर्गत आरोप विरचित किए गए। अपीलार्थी ने आरोप से स्वयं के निर्दोष होने का अभिवचन दिया और विचारण की मांग की।

4. अपने मामले को सिद्ध करने के लिए अभियोजन पक्ष ने 16 साक्षियों का परीक्षण किया। अभियोजन पक्ष ने मूल रूप से अभि.सा.-1 अर्थात् अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य पर निर्भरता व्यक्त की। घटना के समय अभियोक्त्री की आयु 15 वर्ष और 7 महीने थी। उसने अभिसाक्ष्य दिया कि दिनांक 8 नवंबर, 2010 को वह सुनील नामक व्यक्ति के साथ गई थी और उसे सुनील रेलवे स्टेशन ले गया, जहां वे सहारनपुर जाने के लिए ट्रेन में सवार हुए। यद्यपि, वे गलत ट्रेन में सवार हो गए जो गाजियाबाद गई और उसके बाद वे वापस दिल्ली आए और फिर से ट्रेन में सवार हुए जो सहारनपुर पहुंची। सहारनपुर रेलवे स्टेशन पर उनकी मुलाकात अपीलार्थी से हुई जो उसी ट्रेन में सवार हुआ जिसमें अभियोक्त्री और उक्त सुनील यात्रा कर रहे थे। सुनील यह

कहकर ट्रेन से उतर गया कि वह रेलवे टिकट बदलने जा रहा है जबकि अभियोक्त्री और अपीलार्थी ट्रेन में ही रहे। जैसे ही ट्रेन चलने वाली थी, अपीलार्थी ने अभियोक्त्री से कहा कि वह अकेली है और वह उसे सुनील के पास ले जाएगा, जिसके बाद वे दोनों ट्रेन से उतर गए। उन्होंने सहारनपुर रेलवे स्टेशन पर सुनील की तलाश की परंतु वह नहीं मिला। अभियोक्त्री के अनुसार इसके बाद अपीलार्थी उसे अपने दोस्त के घर ले गया जहाँ उसने उसके साथ बलात्कार किया। अपीलार्थी उसे अपनी मोटरसाइकिल पर ले गया था और वे अपनी मोटरसाइकिल पर पूरे शहर में घूमे परंतु फिर से रात के समय, अपीलार्थी उसे एक सुनसान झुग्गी में ले गया और वहाँ भी उसने उसके साथ बलात्कार किया। अगले दिन सुबह, अपीलार्थी अभियोक्त्री को अपनी मोटरसाइकिल पर एक महिला के घर ले गया जिसे उसने दीदी कहकर संबोधित किया परंतु उस महिला ने अपीलार्थी से कहा कि वह अभियोक्त्री को अपने घर में नहीं रखेगी क्योंकि अभियोक्त्री अवयस्क है और इसलिए अपीलार्थी को उस महिला ने अभियोक्त्री को छोड़ने के लिए मजबूर किया और उसके कहने पर अपीलार्थी अभियोक्त्री को छोड़ने के लिए सहमत हो गया। इसके बाद वे दोनों दिल्ली के लिए ट्रेन में सवार हुए और पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन पर पहुँचे जहाँ उसके पिता और पुलिस मौजूद थे और पुलिस ने अपीलार्थी को पकड़ लिया। अभियोक्त्री ने अपने पिता और पुलिस को सभी तथ्य बताए और दं.प्र.सं. की धारा 164 के अंतर्गत उसका बयान भी अभिलिखित किया गया। अभियोक्त्री के

बयान में कहा गया है कि वह अपने माता-पिता के घर से चली गई थी और अपीलार्थी के साथ दिल्ली रेलवे स्टेशन पर पाई गई थी, जिसे उसके पिता और अन्य पुलिस साक्षियों ने संपुष्ट किया है। चिकित्सीय साक्ष्य भी अभियोक्त्री के विवरण को संपुष्ट करते हैं क्योंकि उसके शरीर पर बाएं अग्रभाग के ठीक नीचे खरोंच के निशान, बाएं जांघ पर खरोंच और पीछे के हिस्से पर खरोंच के निशान पाए गए। अभियोक्त्री केवल 15 वर्ष की एक छोटी लड़की थी।

5. दं.प्र.सं. की धारा 313 के अंतर्गत अपना साक्ष्य अभिलिखित करते समय अभियुक्त के विरुद्ध सभी अभियोगात्मक साक्ष्य उसके समक्ष रखे गए, जिसमें उसने अभियोजन पक्ष के मामले से इनकार किया और स्वयं को निर्दोष बताया तथा कहा कि इस मामले में उसे झूठा फंसाया गया है।

6. अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों के गहन परीक्षण के पश्चात्, अपीलार्थी को भा.दं.सं. की धारा 376 के अंतर्गत दोषी सिद्ध किया गया तथा उपरोक्तानुसार दंडादेश दिया गया। यद्यपि, उसे भा.दं.सं. की धारा 506 के अंतर्गत आरोप से दोषमुक्त कर दिया गया।

7. इससे व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा वर्तमान अपील प्रस्तुत की गई है।

8. मैंने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री इमरान खान और राज्य की विद्वान अतिरिक्त लोक अभियोजक सुश्री फिज़ानी हुसैन को सुना तथा अभिलेख का परिशीलन किया है।

9. शुरुआत में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि वह मामले के गुणागुण के आधार पर अपील को चुनौती नहीं देते हैं। अपीलार्थी को जेल से भी बुलाया गया और उसने दोहराया कि वह गुणागुण के आधार पर अपील को चुनौती नहीं देना चाहता है। यद्यपि, यह प्रस्तुत किया गया कि अपीलार्थी को चार वर्ष की अवधि के लिए सश्रम कारावास का दंडादेश दिया गया था, जिसमें से वह पहले ही 3 वर्ष और 6 माह का कारावास भोग चुका है। इस प्रकार, यह प्रस्तुत किया गया कि उसे पहले से भोगी गई अवधि के लिए निर्मुक्त किया जाए। राज्य के विद्वान अति.लो.अभि. ने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा अपीलार्थी की पहले से ही भोगी गई अवधि के लिए निर्मुक्त करने की प्रार्थना का विरोध नहीं किया।

10. मैंने पक्षकारगण के विद्वान अधिवक्ताओं की प्रस्तुतियों पर विचार किया है तथा विचारण न्यायालय के अभिलेख का परिशीलन किया है।

11. अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य और अन्य संपुष्ट करने वाले साक्ष्यों से अभियोजन पक्ष भा.दं.सं. की धारा 376 के अंतर्गत आरोप प्रमाणित करने में सफल रहा। इस संबंध में विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्षों में कोई ऐसी कमी नहीं है जिसके लिए हस्तक्षेप की आवश्यकता हो। यहां तक कि अपीलार्थी ने भी भा.दं.सं. की धारा 376 के अंतर्गत दोषसिद्धि पर विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को चुनौती न देने का विकल्प चुना है। इस प्रकार, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का आदेश पुष्ट माना जाता है।

12. दंडादेश की अवधि के विषय में बात करें तो अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि अपीलार्थी को चार वर्ष का सश्रम कारावास और जुर्माना अधिनिर्णीत किया गया है। अपीलार्थी पहले ही साढ़े तीन वर्ष का दंडादेश भोग चुका है, इसलिए उसे पहले से भोगी गई अवधि के बराबर का दंडादेश दिया जाए।

13. मुख्य रूप से यह ध्यान में रखना चाहिए कि किसी भी अपराध के लिए दंडादेश देने का एक सामाजिक उद्देश्य होता है। अपराध की प्रकृति और अपराध करने के तरीके को ध्यान में रखते हुए दंडादेश दिया जाना चाहिए। दंडादेश अधिरोपित करने का मूल उद्देश्य इस सिद्धांत पर आधारित है कि अभियुक्त को यह एहसास होना चाहिए कि उसके द्वारा किए गए अपराध ने न केवल उसके जीवन को प्रभावित किया है, किंतु सामाजिक ताने-बाने को भी नुकसान पहुंचाया है। न्यायपूर्ण दंड का उद्देश्य यह है कि समाज के व्यक्ति जो अंततः सामूहिक होते हैं, उन्हें ऐसे अपराधों के लिए बार-बार पीड़ा न झेलनी पड़े। यह एक निवारक के रूप में कार्य करता है। यह सत्य है कि कुछ अवसरों पर, दोषी को स्वयं को सुधारने के लिए अवसर दिए जा सकते हैं, परंतु यह भी उतना ही सत्य है कि किए गए अपराध और अधिरोपित दंड के बीच आनुपातिकता के सिद्धांत को ध्यान में रखा जाना चाहिए। इस जटिल प्रक्रिया को करते समय, न्यायालय की ओर से यह अनिवार्य है कि वह पूरे समाज पर

अपराध के प्रभाव और तत्काल सामूहिक पर इसके प्रभाव के साथ-साथ पीड़ित पर इसके प्रभावों को देखे।

14. बलात्कार एक महिला के विरुद्ध किए गए सबसे जघन्य अपराधों में से एक है। यह नारीत्व का अपमान करता है। यह एक महिला की गरिमा का उल्लंघन करता है और उसके सम्मान को नष्ट करता है। यह उसके व्यक्तित्व को क्षीण बना देता है और उसके आत्मविश्वास के स्तर को कम करता है। यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत गारंटीकृत उसके जीवन के अधिकार का उल्लंघन करता है। इस संबंध में, **बोधिसत्व गौतम बनाम शुभा चक्रवर्ती** 1996 (1) एससीसी 490 में शीर्ष न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों पर ध्यान देना उचित होगा, जहां यह देखा गया था कि "बलात्कार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत गारंटीकृत पीड़िता के सबसे प्रिय मूल अधिकारों का उल्लंघन है।

15. बलात्कार एक विपथन, नृशंस, भयावह और राक्षसी तरीके से महिला की गरिमा को अंधकार में दफनाना है। यह पूरे समाज के विरुद्ध अपराध है। **पंजाब राज्य बनाम गुरमीत सिंह और अन्य एआईआर 1996 एससी 1393** में, उच्चतम न्यायालय ने पीड़िता पर बलात्कार के प्रभाव को पीड़ा के साथ देखा:

"हमें यह याद रखना चाहिए कि बलात्कारी न केवल पीड़िता की निजता और व्यक्तिगत अखंडता का उल्लंघन करता है, किंतु इस प्रक्रिया में अनिवार्य रूप से गंभीर मनोवैज्ञानिक और शारीरिक नुकसान भी पहुंचाता है। बलात्कार केवल शारीरिक हमला नहीं है-यह अक्सर पीड़िता के पूरे

व्यक्तित्व को नष्ट कर देता है। एक हत्यारा अपने शिकार के भौतिक शरीर को नष्ट कर देता है, एक बलात्कारी असहाय महिला की आत्मा को अपमानित करता है।”

16. **जुगेंद्र सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2012) में 6 एससीसी 297** में बलात्कार के अपराध की गंभीरता पर विचार करते हुए उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार कहा था:

“बलात्कार या बलात्कार का प्रयास किसी व्यक्ति के विरुद्ध अपराध नहीं है, किंतु यह सामाजिक वातावरण के बुनियादी संतुलन को नष्ट करने वाला अपराध है। इसके परिणामस्वरूप होने वाली मृत्यु और भी भयावह होती है। यह ध्यान में रखना चाहिए कि महिला के शरीर के विरुद्ध अपराध उसकी गरिमा को कम करता है और उसकी प्रतिष्ठा को धूमिल करता है। ऐसा कहा जाता है कि किसी व्यक्ति का शारीरिक ढांचा ही उसका मंदिर होता है। किसी को भी अतिक्रमण करने का कोई अधिकार नहीं है। अभियुक्त का क्षणिक भोग के लिए किया गया प्रयास एक बच्चे की मृत्यु का कारण बना और उसके परिवार पर तथा अंततः सामूहिक रूप से समग्र रूप से विनाशकारी प्रभाव डाला। जब एक परिवार इस प्रकार से पीड़ित होता है, तो पूरा समाज पीड़ित होने के लिए बाध्य होता है क्योंकि यह सामाजिक परिवेश के ताने-बाने में एक असाध्य क्षति पहुंचाता है।”

17. भा.दं.सं. की धारा 376 में बलात्कार के लिए दंड का प्रावधान है। बलात्कार के अपराध के लिए किसी भी प्रकार के कारावास का दंड दिया जा सकता है, जिसकी अवधि सात वर्ष से कम नहीं होगी, परंतु जिसे दस वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है। दोषी को जुर्माना भी देना होगा। धारा 376(1) के परंतुक आप.अ. 1387/2012 पृष्ठ सं. 9

में कहा गया है कि न्यायालय, निर्णय में उल्लिखित पर्याप्त और विशेष कारणों से, सात वर्ष से कम अवधि के कारावास का दंडादेश अधिरोपित कर सकता है। इस प्रकार, भारतीय दंड संहिता (भा.दं.सं.) की धारा 376(1) के अंतर्गत न्यूनतम सात वर्ष के दंडादेश का प्रावधान है। सात वर्ष से कम अवधि के लिए दंडादेश न्यायालय द्वारा केवल इस प्रकार की कमी के लिए पर्याप्त और विशेष कारण बताए जाने के बाद ही दिया जा सकता है। इस प्रकार, बलात्कार के अपराध के लिए सामान्यतः दंडादेश सात वर्ष से कम नहीं होगा। जब विधान-मंडल न्यूनतम दंडादेश का प्रावधान करता है और यह स्पष्ट करता है कि सात वर्ष के न्यूनतम दंडादेश में किसी भी कमी के लिए निर्णय में पर्याप्त और विशेष कारण बताए जाने होंगे, तो न्यायालयों को इस विधायी आदेश का कड़ाई से पालन करना चाहिए।

18. यह अर्थान्वयन का एक मूल नियम है कि किसी परंतुक को उस मुख्य परंतुक के संबंध में, विशेष रूप से, ऐसे दंडात्मक प्रावधानों में विचार किया जाना चाहिए जिसके लिए वह परंतुक के रूप में खड़ा है। क्या कोई "विशेष और पर्याप्त कारण" विद्यमान है, यह विभिन्न कारकों और प्रत्येक मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। सार्वभौमिक अनुप्रयोग के लिए इस संबंध में कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता है।

19. धारा 376(1) को इसके परंतुक के साथ पढ़ने पर विधान-मंडल की यह चिंता झलकती है कि बलात्कारी को आसानी से नहीं छोड़ा जाएगा और जब तक

लिखित रूप में कुछ अपवादकारी परिस्थितियाँ न बताई गई हों, न्यूनतम अर्थात् सात वर्ष से कम का दंडादेश नहीं दिया जा सकता। बलात्कार के दोषी व्यक्तियों पर दंडादेश अधिरोपित करते समय, न्यायालय को सावधान रहना चाहिए और विहित न्यूनतम दंडादेश से कम दंडादेश देने के लिए कारण बताने की आवश्यकता की अनवेक्षा नहीं करनी चाहिए।

20. **कर्नाटक राज्य बनाम कृष्णप्पा** (2000) 4 एससीसी 75 मामले में उच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता (भा.दं.सं.) की धारा 376 के अंतर्गत अपराध के लिए अभियुक्त पर विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित दस वर्ष के सश्रम कारावास के दंडादेश को घटाकर चार वर्ष के सश्रम कारावास में बदल दिया था। इस अविवेक पर कड़ी टिप्पणी करते हुए शीर्ष न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की:

"समाज की सुरक्षा और अपराधी को रोकना विधि का स्वीकृत उद्देश्य है और इसे उचित दंडादेश अधिरोपित करके हासिल किया जाना चाहिए। दंडादेश देने वाले न्यायालयों से अपेक्षा की जाती है कि वे दंडादेश के सवाल से जुड़े सभी प्रासंगिक तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करें और अपराध की गंभीरता के अनुरूप दंडादेश अधिरोपित करें। न्यायालयों को मासूम असहाय लड़कियों पर बलात्कार के जघन्य अपराध के मामलों में समाज द्वारा न्याय के लिए की जा रही जोरदार पुकार को सुनना चाहिए, जैसा कि इस मामले में हुआ है, और उचित दंडादेश देकर जवाब देना चाहिए। न्यायालय द्वारा उचित दंडादेश देकर अपराध के प्रति लोगों की घृणा को दर्शाया जाना चाहिए। अभिलेख पर ऐसी कोई भी परिस्थितियाँ उपलब्ध नहीं हैं जो इस प्रकार के जघन्य अपराध के मामले में प्रत्यर्था पर दया दिखाने के लिए विहित न्यूनतम से कम दंडादेश देना

न्याय का उपहास होगा और उदारता का अभिवाक् पूर्ण रूप से गलत है। न्यायालयों से अपेक्षा की जाती है कि वे दंडादेश प्रणाली को उचित रूप से संचालित करें और प्रमाणित अपराध के लिए ऐसा दंडादेश दें, जो दूसरों द्वारा इस प्रकार के अपराधों के कृत्य हेतु एक निवारक के रूप में कार्य कर सकता है। यौन हिंसा एक अमानवीय कृत्य होने के अलावा एक महिला की निजता और पवित्रता के अधिकार का विधिविरुद्ध अतिक्रमण है। यह उसके सर्वोच्च सम्मान के लिए एक गंभीर झटका है और उसके आत्मसम्मान और गरिमा को ठेस पहुंचाता है - यह पीड़िता को नीचा दिखाता है और अपमानित करता है और जहां पीड़िता एक असहाय मासूम बच्चा है, यह एक दर्दनाक अनुभव को पीछे छोड़ देता है। इसलिए, न्यायालयों से अपेक्षा की जाती है कि वे महिलाओं के विरुद्ध यौन अपराध के मामलों का अत्यंत संवेदनशीलता के साथ निपटान करें। ऐसे मामलों का सख्ती और कठोरता से निपटान किया जाना चाहिए। हमारी राय में, महिलाओं के विरुद्ध अपराध के मामलों में दंडात्मक प्रावधानों के लंबे खंडों, जिनमें जटिल अपवाद और प्रावधान शामिल हैं, की तुलना में सामाजिक रूप से संवेदनशील न्यायाधीश एक बेहतर वैधानिक कवच है।”

21. **आंध्र प्रदेश राज्य बनाम बोडेम सुंदर राव** (1995) 6 एससीसी 230 मामले में अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता (भा.दं.सं.) की धारा 376 के अंतर्गत अपराध के लिए विचारण न्यायालय द्वारा दस वर्ष का दंडादेश दिया गया था। उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को बरकरार रखा, यद्यपि, दंडादेश की अवधि को घटाकर चार वर्ष कर दिया। उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया और दंडादेश को बढ़ाकर सात वर्ष कर दिया जो

भारतीय दंड संहिता (भा.दं.सं.) की धारा 376 के अंतर्गत न्यूनतम विहित दंडादेश है। प्रासंगिक टिप्पणियां इस प्रकार हैं:

"हाल के वर्षों में, हमने देखा है कि महिलाओं के विरुद्ध अपराध बढ़ रहे हैं। ये अपराध समाज की मानवीय गरिमा का अपमान हैं। अत्यधिक अपर्याप्त दंडादेश देना और विशेष रूप से विधान-मंडल के जनादेश के विरुद्ध जाना न केवल विशेष रूप से अपराध के पीड़ित के साथ और सामान्य रूप से पूरे समाज के साथ अन्याय है, किंतु कई बार अपराधी को बढ़ावा भी देता है। दंड देते समय न्यायालयों का दायित्व है कि वे उचित दंड अधिरोपित करें जिससे ऐसे अपराधियों के विरुद्ध न्याय के लिए समाज की पुकार का जवाब दिया जा सके। अपराध के प्रति जनता की घृणा को दंड के माप में न्यायालय के अधिमत के माध्यम से प्रतिबिंबित करने की आवश्यकता है। न्यायालयों को उचित दंड देने पर विचार करते समय न केवल अपराधी के अधिकारों को ध्यान में रखना चाहिए, किंतु अपराध के पीड़ित और बड़े पैमाने पर समाज के अधिकारों को भी ध्यान में रखना चाहिए। एक असहाय 13/14 वर्षीय लड़की के साथ बलात्कार करने का जघन्य अपराध हमारी न्यायिक अंतरात्मा को झकझोर देता है। अपराध अमानवीय था। अभिलेख पर ऐसी कोई परिस्थितियाँ उपलब्ध नहीं हैं जो अधिनियम की धारा 376(1) के अंतर्गत विधानमंडल द्वारा विहित न्यूनतम दंडादेश से कम को उचित ठहरा सकें।"

22. **आंध्र प्रदेश राज्य बनाम पोलामाला राजू @ राजाराव** (2000) 7 एससीसी 75 मामले में उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशगण की न्यायपीठ ने दंडादेश के सवाल पर विचार न करने के कारण उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त कर दिया। उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय को फटकार लगाई

कि उसने भा.दं.सं. की धारा 376 के अंतर्गत दोषसिद्ध किए गए अभियुक्त के दंडादेश को बिना कोई कारण बताए 10 वर्ष के कारावास से घटाकर 5 वर्ष कर दिया। न्यायालय ने कहा:

“...हमारा यह सुविचारित मत है कि दंडादेश देने वाले न्यायालय का यह दायित्व है कि वह दंडादेश के प्रश्न से संबंधित सभी प्रासंगिक तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करे तथा अपराध की गंभीरता के अनुरूप दंडादेश दे।...

XXX

XXX

XXX

... कम से कम यह कहा जा सकता है कि आदेश में कोई कारण नहीं है, "विशेष या पर्याप्त कारण" तो बिल्कुल भी नहीं। बिना उचित सोच-विचार के दंडादेश को यांत्रिक तरीके से कम किया गया है..”

23. अभी हाल ही में, **सिंभू एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य 2013 (10)** स्केल 595 मामले में तीन न्यायाधीशगण की न्यायपीठ ने इस प्रकार के जघन्य अपराध के लिए दंडादेश देते समय उदार दृष्टिकोण अपनाने पर गंभीरता से विचार किया तथा निम्नलिखित टिप्पणी की:-

"यह अधीनस्थ न्यायालयों और उच्च न्यायालयों को यह बताने का एक और अवसर है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अंतर्गत बलात्कार के लिए कड़े प्रावधानों के बावजूद, अतीत में कई न्यायालयों ने ऐसे जघन्य अपराध के लिए दंडादेश अधिनिर्णीत करते समय नरम रुख अपनाया है। इस न्यायालय ने अतीत में देखा है कि कुछ अधीनस्थ और उच्च न्यायालयों ने भारतीय दंड संहिता की धारा 376(2) के परंतुक का सहारा लेकर अभियुक्त के दंडादेश को पहले से ही भुगती गई अवधि तक

कम कर दिया है। उपरोक्त प्रवृत्ति ऐसे मामलों में अधिरोपित आनुपातिक दंड की आवश्यकता के प्रति घोर असंवेदनशीलता प्रदर्शित करती है।"

24. उपरोक्त विधिक निर्णयों में की गई टिप्पणियां दर्शाती हैं कि बलात्कार के अभियुक्त को दंडादेश देते समय न्यायालयों का दृष्टिकोण क्या होना चाहिए। वर्तमान मामले का परीक्षण उपरोक्त चर्चा के आलोक में किया जाना चाहिए।

25. विचारण न्यायालय का आदेश यह दर्शाता है कि उसने चार वर्ष के सश्रम कारावास का दंडादेश अधिनिर्णीत करके उदार दृष्टिकोण अपनाया है, जिसका अर्थ है कि संभवतः धारा 376(1) के परंतुक के अंतर्गत इस अधिनियम के अंतर्गत विहित न्यूनतम दंडादेश से कम है, इस आधार पर कि दोषी ने अभियोक्त्री को उसके पैतृक घर वापस ले जाने के लिए सहमत होने में अच्छा व्यवहार दिखाया था जब उसे पकड़ा गया था। इसे इस अधिनियम के अंतर्गत विहित न्यूनतम दंडादेश से कम दंडादेश करने के लिए "विशेष या पर्याप्त कारण" नहीं कहा जा सकता। यद्यपि, राज्य ने दंडादेश बढ़ाने के लिए कोई अपील प्रस्तुत नहीं की है। परिस्थितियों में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रार्थना के अनुसार अपीलार्थी द्वारा पहले से ही भोगी गई अवधि तक दंडादेश को कम करने का कोई मामला नहीं बनता।

26. उपर्युक्त चर्चा का परिणाम यह है कि अपील में कोई गुणागुण नहीं है और तदनुसार इसे खारिज किया जाता है।

आदेश की एक प्रति विचारण न्यायालय के अभिलेख के साथ वापस भेजी जाए।

सुनीता गुप्ता
(न्यायाधीश)

दिसंबर 20, 2013/एके

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।